E-ISSN: 2664-603X
P-ISSN: 2664-6021
IJPSG 2021; 3(1): 01-03
www.journalofpoliticalscience.com
Received: 03-11-2020
Accepted: 07-12-2020

शिशिर कुमार पाठक
गवेषक, राजनीति विज्ञान विभाग, ल0 ना0 मिथिला विश्वविद्याल, दरभंगा, भारत।

Corresponding Author:
शशिर कुमार पाठक
गवेषक, राजनीति विज्ञान विभाग, ल0 ना0 मिथिला विश्वविद्याल, दरभंगा, भारत।

गांधी की अहिंसा एवं मूल्य की राजनीति का वर्तमान स्वरूप

शिशिर कुमार पाठक

सारांश
एक समय था जब पूरे विश्व ने गिरमिटिया श्रम को एक सामाजिक व्यावस्था के रूप में स्वीकार कर लिया था, तब गांधी जी ने इस प्रथा का पुरजोर विरोध किया था। यही नहीं जब पूरी दुनिया में हिंसात्मक युद्ध छिड़ा हुआ था, तब गांधी जी ने अहिंसात्मक युद्ध शुरू कर दिया था। उन्होंने हिंसात्मक इतिहास को अहिंसा में बदल दिया। राजनीतिक संघर्ष हल करने के लिए जिस तरह से उन्होंने अहिंसात्मक प्रतिरोध यानी सत्याग्रह का उपयोग किया, इससे हुआ ये कि बाद की दुनिया में राजनीतिक संघर्षों के हल के लिए यह सर्वोत्तम माध्यम बन गया। गांधी जी हिंसात्मक कार्यों के दुष्प्रभावों से अच्छी तरह वाकिफ थे। वह खुद दक्षिण अफ्रीका में बोअर युद्ध और जुलू विद्रोह के दौरान युद्ध के साथ जुड़े हुए थे और तब तक वे दो विश्व युद्ध की विभिषिका से परिचित हो चुके थे। इस पत्र के माध्यम से गांधी की अहिंसा एवं मूल्य की राजनीति के वर्तमान स्वरूप पर विश्लेषण प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

मूल शब्दः महात्मा गांधी; अहिंसा; नैतिक मूल्य; वर्तमान स्वरूप।

प्रस्तावना
यह स्मरणीय तथ्य है कि 1915 से लेकर 1945 तक की काल अवधि को इतिहास में एक महत्वपूर्ण समय माना जाता है। पूरी दुनिया ने माना कि हिंसक तरीके से विवादों को केवल निपटाया जाता है, उस विवाद की जड़ को खत्म नहीं किया जाता। वास्तविकता यह है कि युद्ध में मुद्दों को निपटाने के लिए एक साधन के रूप में स्वीकार कर लिया गया था। उस समय के विश्व के तमाम छोटे–बड़े नेता प्रथम व द्वितीय विश्व युद्ध और यूरोप में हो रहे कई युद्धों में शामिल थे। लेकिन उसी समयावधि में जब पूरी दुनिया हिंसात्मक युद्ध में उलझी हुई थी और इसी पर उसने अपना विश्वास कायम किया हुआ था, तब ऐसी विपरित परिस्थिति में गांधी जी अकेले ऐसे शख्स थे, जिन्होंने सोचा था कि युद्ध और हिंसा का अधिक रचनात्मक विकल्प होना चाहिए।
यही कारण है कि गांधी जी ने नस्लीय भेदभाव के खिलाफ सबसे पहले दक्षिण अफ्रीका में सीधे अहिंसात्मक कार्रवाई शुरू की। यहीं से उन्होंने पूरी दुनिया में सत्य और अहिंसा की वास्तविक शक्ति का सफलतापूर्वक न केवल प्रदर्शन किया बल्कि इसे साबित करने में वे सफल भी रहे। गांधीजी ने सावधानीपूर्वक दुनिया को अहिंसा के नए रूप से न केवल परिचित बल्कि इसे जीने का एक मार्ग भी बताया। वे दुनिया के सामने यह सिद्ध करने में सफल रहे कि एक सभ्य समाज के लिए संघर्ष के संकल्प की सबसे व्यावहारिक और शक्तिशाली तकनीक अहिंसा में निहित है। गांधी की अहिंसा स्थिर नहीं है, यह बदलती स्थितियों के लिए विकसित और अनुकूल है। उन्होंने दक्षिण अफ्रीका और भारत में नस्लीय भेदभाव के खिलाफ अपने अहिंसात्मक प्रतिरोध का इस्तेमाल किया। उन्होंने ब्रिटिश राज के खिलाफ लड़ने के लिए अहिंसक तरीकों का इस्तेमाल किया। उन्होंने माना कि "हिंसा किसी दुश्मन को कमजोर कर सकती है, लेकिन यह लोगों को इस एजेंडे को गले लगाने के लिए कतई मजबूर नहीं कर सकती। सत्ता के लिए अपने तरीके से पुराने आदेशों को नष्ट कर सकते हैं, लेकिन आप अपने लोगों को तब तक मुक्त नहीं कर सकते जब तक वे आपको अपनी सहमति नहीं देते।"[1]
एक गरीब आदमी महसूस करता है कि वह अन्य से बेहतर है, वास्तव में वह अंधेरे में है। गांधी जी आम आदमी की दुर्दशा से बहुत अधिक चिंतित थे। उन्होंने महसूस किया कि हमें वर्तमान स्थिति को बदलना होगा ताकि गरीब व्यक्ति भी सम्मान के साथ अपना सिर उठा सके। ऐसा करने के लिए उन्होंने तीन तरीके खोजे, नफरत के स्थान पर प्रेम का बर्ताव किया जाना चाहिए। लालच को प्यार से बदलें और ऐसे में सब कुछ ठीक हो जाएगा। अगर इसका पालन सच्ची भावना से किया जाए तो यह लोगों के साथ काम करने के लिए एक पेशेवर तरीके से काम करने के विश्वास को और आगे बढ़ाएगा। इसलिए उन्होंने इस बात का आह्वान किया कि क्रोध व नफरत को प्यार और करुणा के मूल्य से बदलना चाहिए। हमारे मन में क्रोध और घृणा छा जाती है और हिंसक कार्य करने के लिए उतारु हो जाते हैं। गांधी जी ने इस विनाशकारी वृत्ति को दूर करने का सूत्र दिया

कि तर्क मस्तिष्क से आता है और सहानुभूति दिल में रहती है। हमें सत्य का पालन करना है ताकि मस्तिष्क से यह हृदय तक फैल जाए। मस्तिष्क द्वारा प्राप्त किसी भी सत्य को तुरंत हृदय तक भेजना चाहिए। जब तक इसे नीचे नहीं भेजा जाता है, तब तक यह मस्तिष्क के लिए जहर जैसा होता है और पूरे तंत्र को जहरीला बना देता है। इसलिए, मस्तिष्क का उपयोग करने की आवश्यकता है। जो भी प्राप्त होता है उसे तत्काल कार्रवाई के लिए हृदय में प्रेषित किया जाना चाहिए।

करुणा और प्रेम के साथ और विरोधी के प्रति बिना घृणा या क्रोध के हम रचनात्मक ऊर्जा उत्पन्न कर सकते हैं। "मानव प्रजातियों की एकता केवल एक जैविक और शारीरिक तथ्य नहीं है, यह तब होता है जब एक बड़ी शक्ति समझदारी से पूरी तरह से मुखर होकर काम करती है।" उन्होंने कहा कि अहिंसा से बढ़कर कोई भी ऐसा हथियार नहीं है, जिसे दृढ़ विश्वास के साथ, साहस के साथ, विश्वास के साथ संभाला जाए। पढ़ना, लिखना आदि के साथ यह आवश्यक है कि हमें अपने साथियों से प्रेम करने की कला और जीवन जीने की कला भी सीखनी चाहिए। हमें संघर्ष और अस्तित्व के लिए संघर्ष की अवधारणा से पारस्परिक सहायता और सहयोग के लिए आगे बढ़ना है। गांधी के व्यावहारिक विचारों ने लोगों की जरूरतों के साथ प्रकृति के सामंजस्य को एक नई दृष्टि दी है। सत्य और अहिंसा, सरल जीवन और उच्च विचार और समग्र विकास के उनके विचारों से पता चलता है कि प्रकृति और हमारे साथी जीवों को नष्ट किए बिना सतत् विकास कैसे संभव है। वह मनुष्य और प्रकृति के बारे में अपने विचारों में स्पष्ट थे और उन्होंने सभी जीवित और निर्जीव प्राणियों के बीच सहजीवी संबंध को समझा। उनका विचार है कि प्रकृति में हर एक को संतुष्ट करने के लिए पर्याप्त ऊर्जा है, लेकिन किसी के लालच को संतुष्ट करने के लिए नहीं। आधुनिक पर्यावरणवाद के लिए यह पंक्ति एक महावाक्य बन गई है। गांधी पृथ्वी को एक जीवित जीव मानते थे।[2]

हाल की महामारी ने हमारी आंखों को वास्तविकताओं से परिचित कराया है। शहर और शहरी क्षेत्र, ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में अधिक असुरक्षित हैं। हमारा विकास मॉडल मौलिक रूप से कैसे गलत है। इस संदर्भ में, हम गांधी द्वारा प्रस्तावित विकास के विचारों पर फिर से विचार करने के लिए मजबूर हैं। उनका आर्थिक दर्शन स्थिर नहीं, बल्कि जीवंत और व्यापक रहा है। यह तकनीक केंद्रित नहीं है, बल्कि जन केंद्रित है। मुट्ठी भर शहरों का विकास हमारी आर्थिक समस्याओं को हल नहीं कर सकता है। वास्तव में यह हमारी समस्याओं को और बढ़ाएगा। इसलिए गांधी ने गांवों के आर्थिक विकास पर अधिक ध्यान केंद्रित किया। बड़े पैमाने पर उत्पादन की बजाय, उन्होंने छोटे पैमाने पर उत्पादन का सुझाव दिया। केंद्रीकृत उद्योगों के बजाय, उन्होंने विकेंद्रीकृत छोटे उद्योगों का सुझाव दिया। बड़े पैमाने पर उत्पादन केवल उत्पाद से संबंधित होता है, जबकि जनता द्वारा उत्पादन का संबंध उत्पाद के साथ–साथ उत्पादकों से भी है और इसमें शामिल प्रक्रिया से भी है। उनका एक आदर्श गांव का सपना था। बड़े पैमाने पर उत्पादन से लोग अपने गांव, अपनी जमीन, अपने शिल्प को छोड़कर कारखानों में काम करने पर मजबूर हो जाते हैं। गरिमामय जिंदगी और एक स्वाभिमानी ग्राम समुदाय के सदस्यों के बजाय, लोग मशीन के चक्रव्यू में फंस कर रह जाते हैं और मालिकों की दया पर जिंदगी गुजरबसर करने लगते हैं। हमने यह भी देखा है कि इस दौरान प्रवासी श्रमिक के साथ कैसा व्यवहार किया गया। कैसा अमानवीय व्यवहार। हमें अपने महानगरों और पुलों के निर्माण के लिए उनकी आवश्यकता थी लेकिन हम उनकी आवश्यकता नहीं हैं। उन्होंने हमारे जीवन को आसान बना दिया लेकिन हमने उन्हें क्या दिया। यह विनाशकारी विकासात्मक मॉडल प्रवासी लोगों को बेरोजगार करता है।

आज, जब हमारे सार्वजनिक जीवन के साथ–साथ हमारे निजी जीवन में नैतिक मूल्यों का गहरा क्षरण हुआ है और जब नैतिक सिद्धांत राजनीति से लगभग गायब हो गए हैं, तो गांधीवादी मूल्य एक प्रभावी विकल्प के रूप में दिखाई देते हैं। अपने समय में गांधी जी ने न केवल राजनीतिक बल्कि देश को नैतिक नेतृत्व भी प्रदान किया, जो कि अब दुनिया से गायब हो चुका है। जैसा कि मार्टिन लूथर किंग ने सही कहा, "गांधी अपरिहार्य थे। अगर मानवता की प्रगति करनी है, तो गांधी अपरिहार्य हैं। उन्होंने शांति और सद्भाव की दुनिया विकसित करने की ओर प्रेरित किया। हम अपने जोखिम पर गांधी की उपेक्षा कर सकते हैं।"[3]

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के दौरान सत्य और अहिंसा का उद्घोष कर आंदोलन की धार को और पैनी करने वाले महात्मा गांधी किसी परिचय के मोहताज नहीं हैं। उन्होंनें स्वतन्त्र भारत के पुनर्निर्माण के लिए रामराज्य का स्वप्न देखा था। वे कहा करते थे कि "नैतिक और सामाजिक उत्थान को ही हमने अहिंसा का नाम दिया है। यह स्वराज्य का चतुष्कोण है। इनमें से एक भी अगर सच्चा नहीं है तो हमारे स्वराज्य की सूरत ही बदल जाती है। राजनीतिक स्वतन्त्रता से मेरा मतलब किसी देश की शासन प्रणाली की नकल से नहीं है। उनकी शासन प्रणाली अपनी–अपनी प्रतिभा के अनुसार होगी, परन्तु स्वराज्य में हमारी शासन प्रणाली हमारी अपनी प्रतिभा के अनुसार होगी। मैंने उसका वर्णन 'रामराज्य' शब्द के द्वारा किया है। अर्थात् विशुद्ध राजनीति के आधार पर स्थापित तन्त्र। मेरे स्वराज्य को लोग अच्छी तरह समझ लें, भूल न करें। संक्षेप में वह यह है कि विदेशी सत्ता से सम्पूर्ण मुक्ति और साथ ही सम्पूर्ण आर्थिक स्वतंत्रता। इस प्रकार एक सिरे पर आर्थिक स्वतंत्रता है और दूसरे सिरे पर राजनीतिक स्वतंत्रता, परन्तु इसके दो सिरे और भी हैं। इनमें से एक है नैतिक व सामाजिक और दूसरा धर्म। इसमें हिन्दू धर्म, इस्लाम, ईसाई वगैरह आ जाते हैं। परन्तु एक जो इन सबसे उपर है, इसे हम सत्य का नाम दें सकते हैं। सत्य यानि कि केवल प्रासंगिक ईमानदारी नहीं बल्कि वह परम सत्य जो सर्व व्यापक है और उत्पत्ति व लय से परे है।"[4]

मूलरूप से गांधी जी की सामाजिक–आर्थिक व्यवस्था करुणा, प्रेम, नैतिकता, धार्मिकता व ईश्वरीय भावना पर आधारित है। उन्होंनें नरसेवा को ही नारायण सेवा मानकर दलितोद्धार व दरिद्रोद्धार को अपने जीवन का ध्येय बनाया। वे शोषणमुक्त, समतायुक्त, ममतामय, परस्पर स्वावलम्बी, परस्पर पूरक व परस्पर पोषक समाज के प्रबल हिमायती थे। उनका मानना था कि राजसत्ता और अर्थसत्ता के विकेन्द्रीकरण के बिना आम आदमी को सच्चे लोकतन्त्र की अनुभूति नहीं हो सकती। सत्ता का केन्द्रीयकरण लोकतन्त्र की प्रकृति से मेल नहीं खाता। उनकी ग्राम–स्वराज्य की कल्पना भी राजसत्ता के विकेन्द्रीकरण पर आधारित है।

5 फरवरी 1916 को काशी के नागरी प्रचारिणी सभागार में एक कार्यक्रम को सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा था–"मेरे सपनों का स्वराज्य गरीबों का स्वराज्य होगा। जीवन की जिन आवश्यकताओं का उपभोग राजा और अमीर लोग करते हैं, वही उन्हें भी सुलभ होना चाहिए। इसमें फर्क के लिए कोई स्थान नहीं हो सकता। ऐसे राज्य में जाति–धर्म के भेदों का कोई स्थान नहीं हो सकता। उस पर धनवानों और अशिक्षितों का एकाधिपत्य नहीं होगा। वह स्वराज्य सबके कल्याण के लिए होगा। लेकिन यह स्वराज्य प्राप्त करने का एक निश्चित रास्ता है।" इसको समझाने के लिए वे कहते थे–"ध्येयवादी जीवन के चार तत्व होते हैं– साधक, साधन, साधना और साध्य। साध्य का अर्थ लक्ष्य या ध्येय से है। यदि किसी समय हमारा लक्ष्य धन कमाना है, तो धन कमाने के भी कई तरीके हो सकते हैं। यह धन चोरी करके भी प्राप्त किया जा सकता है और पुरूषार्थ व पराक्रम से भी, लेकिन पुरूषार्थ व पराक्रम से प्राप्त धन 'पवित्र धन' कहा जायेगा और चोरी से प्राप्त धन 'चोरी का धन'। ऐसी स्थिति में साध्य पवित्र

नहीं रह जायेगा। इसलिए साध्य की पवित्रता के लिए यह आवश्यक है कि साधन, साधक व साधना तीनों पवित्र हों। किसी एक के पवित्र होने से काम नहीं चलेगा।"[5]

गांधी जी के विचार और वर्तमान के सम्बन्ध में चिन्तन करने पर लगता है कि आज की स्थिति, परिस्थिति और लोगों की मनःस्थिति में बहुत अन्तर है। सब एन–केन–प्रकारेण साध्य तक पहुँचने को आतुर दिखते हैं। इस आतुरता की जिद में सारे नीति, नियम, कायदे व कानून को तोड़कर हम अनैतिक व हिंसक हो जाते हैं। यहीं से विकृति प्रारम्भ होती है, और राष्ट्रहित के स्थान पर स्वहित दिखायी देने लगता है। हर क्षेत्र में आधारभूत ढांचे से हटकर परिवर्तन हुआ है। इस सृष्टि की सर्वोच्च शासन व्यवस्था 'लोकतन्त्र' पूँजीवादी तन्त्र में परिवर्तित हो गयी है। सामान्य निर्धन व्यक्ति जनता का प्रतिनिधित्व नहीं कर सकता। संसद और विधानमण्डल के दोनों सदनों में लगभग 45 प्रतिशत से अधिक सदस्य किसी न किसी प्रकार से अपराधियों की श्रेणी में आ जाते हैं। कुल मिलाकर आज की राजनीति में अपराधियों का बोल–बाला है।

निष्कर्ष

आधुनिक भारत का निर्माण करने वालों नें आधुनिक शिक्षा बनाने की आड़ में गांधी के विचारों को दरकिनार कर दिया। जिससे आज ऐसी स्थिति हो गयी है कि एक गरीब बालक के लिए वांछित शिक्षा प्राप्त करना दुष्कर हो गया है। इन सारी स्थितियों और परिस्थितियों का एक कारण यह भी है कि गांधीवादी विचारधारा का झंडा तथाकथित गांधीवादियों ने थाम रखी है। जिस चरखे और खादी से उन्होंनें जन–जन को जागरुक किया था, वही आज हासिये पर धकेल दिया गया है। खादी पहनने वाले खादी की लाज भूल चुके हैं। उनके लिए खादी स्वयं को नेता सिद्ध करने वाली पोषाक भर बन कर रह गयी है। उनके सहयोगियों नें उनके मूल्यों और कार्यक्रमों को तिलाजंलि दे दी है। सरकार के काम–काज में गांधीवादी सरोकारों और लक्ष्यों को देखना निराश ही करता है।

संदर्भ

1. जेसुदासन, ईग्नेसिअस आजादी के लिए गाँधी का धर्मग्रन्थ गुजरात साहित्य प्रकाशनः आनंद इंडिया, 1987, पृ. 236–237
2. मूर्ती, श्रीनिवास महात्मा गाँधी और लियो टालस्टाय के पत्र लांग बीच प्रकाशन : लांग बीच, 1987, पृ. 13
3. द मेकिंग ऑफ़ अ पोलिटिकल रिफोर्मार : गाँधी इन साऊथ अफ्रीका, 1893–1914. सुरेन्द्र भाना और गुलाम वाहेद, 2005, पृ. 45.
4. भारतन कुमारप्पा, संपादक फॉर पसिफिस्ट्स एम;के; द्वारा लिखित, गांधी, नवजीवन प्रकाशन हाउस, अहमदाबाद , भारत , 1949, पृ. 56
5. बोंदुरंत्त, जुआअन वी. हिंसा की जीतः गाँधीवादी दर्शन का संघर्ष. प्रिन्सटन यूपी, 1998, पृ. 74